वैज्ञानिकों की सूझबूझ और संवेदनशीलता

अरुणा दत्तात्रेयन

सवाल यह है कि क्या विज्ञान का व्यापारीकरण करने या मुनाफे की चाह में वैज्ञानिक अपने काम के सामाजिक असर और उससे उठने वाले नैतिक मुद्दों को अनदेखा कर सकते हैं? क्या वैज्ञानिक कार्य के मानवीय व पर्यावरणीय प्रभाव की ज़िम्मेदारी से मुकर सकते हैं?

मध्यपूर्व के वर्तमान संकट, मानव जाति के लिए अनावश्यक कष्ट पैदा करने वाली घटनाओं और युद्धोपरांत समस्याओं का तकाज़ा है कि हम वैज्ञानिक थोड़ा चिंतन करें। इराक और अमरीका के नेतृत्व वाले गठबंधन के बीच यह टकराव रासायनिक व जैविक हथियारों के भण्डारण व उपयोग के खतरों के मुद्दे पर शुरू हुआ था।

जिस ढंग से विज्ञान व टेक्नॉलॉजी का उपयोग गोला-बारूद और घातक जैविक व रासायनिक हथियारों के विकास में सोचा जा रहा है, उस संदर्भ में शायद फ्रैंकलीन जेम्स की यह टिप्पणी लागू होती है कि, 'यह एक ऐसा सौदा है जिसका मोह त्यागना मुश्किल है और जिसका उपयोग उतना लाभदायक नहीं है।' यदि हम समाज में, और खासकर रक्षा अनुसंधान में विज्ञान व टेक्नॉलॉजी के योगदान व प्रभाव का आकलन करें तो पाते हैं कि बीसवीं सदी के दौरान विशुद्ध विज्ञान के क्षेत्र में ज़बर्दस्त तरक्की हुई है - पूर्वार्ध में भौतिकी और उत्तरार्ध में जीव विज्ञान का बोलबाला रहा। इस प्रगति ने विज्ञान और समाज के परस्पर सम्बंधों में आमूल परिवर्तन किए हैं।

बीसवीं सदी के प्रारंभ में स्थिति यह थी कि किसी वैज्ञानिक खोज और व्यावहारिक उपयोग के बीच समय का एक लंबा अंतराल होता था। किसी खोज का उपयोग ढूंढने में दशकों लग जाते थे। इसके अलावा किसी भी खोज के उपयोग का काम भिन्न लोग करते थे - यानी इंजीनियर्स वगैरह। आम मानव क्रियाकलाप से वैज्ञानिक अलहदा रहते थे। इसका परिणाम यह था कि वे बिल्कुल अलग-थलग रहते थे और यह मुगालता पाल सकते थे कि उनके काम का मानव कल्याण से कोई सम्बंध नहीं है। उनका मानना था कि वैज्ञानिक अनुसंधान का मकसद प्रकृति के नियमों को समझना है; चूंकि ये नियम अपरिवर्तनीय हैं और इन पर मानवीय भावनाओं व प्रतिक्रियाओं का कोई असर नहीं होता, इसलिए विज्ञान में इन भावनाओं व प्रतिक्रियाओं के लिए कोई जगह नहीं है।

इस अलहदा प्रकृति के चलते वैज्ञानिकों ने विज्ञान को लेकर कुछ नियम व सिद्धांत विकसित किए। ऐसे कुछ सिद्धांत थे - 'विज्ञान सिर्फ विज्ञान के लिए', 'विज्ञान को उसके दुरुपयोग के लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता।'

आजकल वैज्ञानिक कई भूमिकाओं में नज़र आता है। मसलन उसे यह भविष्यवाणी करनी होती है कौन-सी टेक्नॉलॉजी बिकेगी और अधिकतम मुनाफा देगी। हो सकता है कि विज्ञान के बुनियादी विषयों पर काम रहे वैज्ञानिक इससे सहमत न हों, वे कहेंगे कि अधिकांश वैज्ञानिक यथार्थ से अछूते रहते हैं और 'कमाई' व 'मुनाफा' जैसे शब्द मात्र अपने संस्थान के वार्षिक बजट वगैरह में देखते हैं।

हर कामकाजी वैज्ञानिक मानता है कि ब्रह्माण्ड को चलाने वाली शक्तियों पर उसकी थोड़ी पकड़ है और उसे मनपसंद काम करने के लिए पैसा मिलता है (जो शायद कहीं और नहीं मिलता)।

एक किस्सा है जिसे भैतिकशास्त्री सुनाया करते हैं। किस्सा यह है कि रदरफोर्ड चाहते थे कि उनके सहयोगी जॉन कॉक्रॉफ्ट और अर्नेस्ट वाल्टन 'एक साबुन की डिबिया से लाख वोल्ट' प्राप्त करें। यह उन्होंने उस प्रयोग के संदर्भ में कहा था जिसमें एक एक्सलरेटर बनाकर परमाणु का विखण्डन करना था। और उन्होंने पेट्रोल पम्प से कांच का एक सिलेंडर, कुछ लकड़ी के टुकड़े और कीलें लेकर

यह काम कर डाला था। यह काम 1932 में कैम्ब्रिज की केवेण्डिश प्रयोगशाला में सम्पन्न हुआ था। अपनी सस्ती सी, घरेलू मशीन में उन्होंने एक प्रोटोन पुंज की मदद से लीथियम नाभिक का विखण्डन किया था और आधुनिक भौतिकी के महत्वपूर्ण पड़ाव पर पहुंचे थे। मगर वे दिन लद गए जब विज्ञान थोड़े से धागे और लाख के सहारे चल जाता था। आजकल विज्ञान एक महंगा धंधा है और फण्ड की तंगी है। यदि रदरफोर्ड जीवित होते तो अपने साथियों से 'साबुन की डिबिया से लाख पाउण्ड पैदा करने' की मांग करते।

सवाल यह है कि क्या विज्ञान का व्यापारीकरण करने या मुनाफे की चाह में हम वैज्ञानिक अपने काम के सामाजिक असर और उससे उठने वाले नैतिक मुद्दों को अनदेखा कर सकते हैं? क्या वैज्ञानिक कार्य के मानवीय व पर्यावरणीय प्रभाव की ज़िम्मेदारी से हम मुकर सकते हैं? सुदूर अतीत में ऐसे सवाल नहीं उठते थे क्योंकि तब ऐसे प्रभाव भी बहुत ज़्यादा नहीं होते थे। उस समय रोज़मर्रा के जीवन में और राज्यों की सुरक्षा में विज्ञान का इतना दखल नहीं था। वैज्ञानिक क्रियाकलापों के पीछे प्रेरणा मात्र जिज्ञासा की हुआ करती थी। उसके कोई व्यावहारिक लक्ष्य नहीं थे।

आज हम एक विश्व समुदाय के अंग हैं जहां परस्पर निर्भरता बहुत अधिक है। यह परस्पर निर्भरता काफी हद तक वैज्ञानिक अनुसंधानों से हुई तकनीकी प्रगति की वजह से पैदा हुई है। एक परस्पर निर्भर समुदाय अपने सदस्यों को कई फायदे उपलब्ध कराता है मगर साथ ही उन पर कई ज़िम्मेदारियां भी डालता है। प्रत्येक नागरिक अपने कार्यों के लिए जवाबदेह होता है। अन्य नागरिकों की अपेक्षा वैज्ञानिकों की ज़िम्मेदारी अधिक है। आज लोग मनपसंद 'डिज़ाइनर बच्चों' की बातें कर रहे हैं, जिनेटिक रूप से परिवर्तित भोजन की बातें कर रहे हैं, या अंतरिक्ष में बस्तियां बसाने के मन्सूबे बांध रहे हैं। यह सच है कि विज्ञान समाज में एक निर्णायक कारक बन गया है। विज्ञान ने जीवन की गुणवत्ता में बहुत सुधार किया है मगर साथ ही तमाम संकट भी पैदा कर दिए हैं। इनमें पर्यावरण प्रदूषण, कीमती संसाधनों का ह्रास, संक्रामक रोगों में वृद्धि आदि गिनाए जा सकते हैं। मगर सबसे बड़ा खतरा तो जनसंहार के हथियारों से पैदा हुआ है।

1997 में अपना श्रोडिंजर व्याख्यान देते हुए गणितज्ञ माइकेल एटिया ने वैज्ञानिकों की ज़िम्मेदारी के कारण स्पष्ट किए थे - 'सबसे पहला तर्क तो नैतिक दायित्व का है। यदि आप कोई चीज़ बनाते हैं तो आपको उसके परिणामों की ज़िम्मेदारी लेनी होगी। यह बात वैज्ञानिक खोजों पर भी उसी तरह लागू होनी चाहिए जितनी बच्चे पैदा करने पर।' एटिया आगे चार और कारण गिनाते हैं कि क्यों वैज्ञानिकों को अपने कामों की ज़िम्मेदारी उठानी चाहिए। उन्होंने कहा था कि राजनीतिज्ञों और नागरिकों की अपेक्षा वैज्ञानिक तकनीकी समस्याओं को बेहतर समझते हैं और इस ज्ञान की अपनी ज़िम्मेदारी होती है। इसके अलावा वैज्ञानिक प्रासंगिक समस्याओं के हल सुझा सकते हैं, तकनीकी सलाह दे सकते हैं। एक आम नागिरक की अपेक्षा भावी खतरों के प्रति आगाह करने में अधिक सक्षम हो सकते हैं; खास तौर से उन खतरों के प्रति जो नई-नई खोजों की वजह से पैदा हो सकते हैं। और सबसे बड़ी बात तो यह है कि वैज्ञानिक एक अंतर्राष्ट्रीय बिरादरी के सदस्य हैं जो कुदरती सरहदों से ऊपर हैं। लिहाज़ा वे एक वैश्विक दृष्टिकोण प्रस्तुत कर सकते हैं।

इसके हाथ ही हम सबसे अहम सवाल पर आते हैं - क्या हम वैज्ञानिकों को 'मानवीय चेहरे' वाले विज्ञान के बारे में सोचना चाहिए? यह कहना इसलिए ज़रुरी है क्योंकि हमारे आदर्श चाहे कितने ही ऊंचे हों, मगर तथ्य यह है कि विज्ञान पदार्थ व ब्रह्माण्ड के बारे में कतिपय किस्म के सवालों का ही जवाब दे सकता है।

मगर जब हम उस स्तर पर उतरते हैं, हम अपना रोज़मर्रा का जीवन बसर करते हैं; अन्य इंसानों से हमारे सम्बंध, हमारी आकांक्षाएं, राजनीति, व्यक्तिगत निर्णय और नैतिक दुविधाएं; इस स्तर पर इंसानी परिप्रेक्ष्य से विज्ञान के पास कोई सटीक जवाब नहीं हैं। विज्ञान, अधिक से अधिक, खुले दिमाग और तथ्यों पर गौर करने की तत्परता का वादा कर सकता है। ***(स्रोत विशेष फीचर्स)***